अग्नि पुराण परिचर्चा : प्रास्ताविक सम्बोधन

प्रो. विद्यानिवास मिश्र

अग्निपुराण देखा तो ऐसा लगा कि यह एक दृष्टि से तो बड़ा महत्त्वपूर्ण है। जितना इस पुराण में विभिन्न शास्त्रों की उपादेय सामग्री है, उतनी दूसरे पुराण में नही है। दूसरी दृष्टि से इसमें अन्य पुराणों की तरह कोई योजना नहीं है। राम केन्द्र में हैं बहुत कुछ, पर ऐसी योजना नहीं है कि तमाम विषयों का निष्पन्दन किसी एक बिन्दु से हो, ऐसी योजना नहीं है। जैसी कि **श्रीमद्भागवत** की, **वायुपुराण** की, **विष्णुपुराण** की है। उनमें भी बहुत सी सामग्री है। हर पुराण में ऐसी सामग्री है जो दूसरे पुराणों में नही है। इसमें जो महत्त्वपूर्ण सामग्री है, वह है वास्तु से सम्बद्ध। उतनी सामग्री दूसरे पुराण में नही है। **विष्णुपुराण** में सामग्री है, **विष्णुधर्मोत्तर** में, लेकिन वह चित्रकला से सम्बद्ध है, इतिहास से सम्बन्ध है, कुछ उक्ति के विश्लेषण से सम्बन्ध है, वास्तु सामग्री अधिक नहीं है। पुराण एक दूसरे के पूरक हैं, उस अर्थ में यह पूरक तो है और दूसरी सामग्री हमको बड़ी उपादेय लगी, इसमें राजधर्म के बारे में। इस सामग्री का तुलनात्मक अध्ययन कुछ लोगों ने किया है **मनुस्मृति** से, **याज्ञवल्क्यस्मृति** से, **महाभारत** से और **शुक्रनीति** तथा **अर्थशास्त्र** से। पर इसमें बहुत सी नयी सामग्री है। विस्तार में कुछ विधान है, दण्ड का विधान विस्तार में है। साथ ही राजा के कर्तव्यों का विस्तार में विधान है। यह विस्तार सूचित करता है कि तीन चार सौ वर्षों तक जो राज शासन भारतवर्ष में उसके पूर्व चलता रहा होगा, उसकी गहरी छाप है, क्योंकि उसका ताल मेल उस समय के आसपास है, उसके पूर्ववर्ती अभिलेखों के दान पत्रों या प्रशस्ति पत्रों से होता है, किनको करमुक्त किया जाय, किन विषयों पर कर लगाया जाय, किनको किनकी स्थिति में रक्षा की जाय, राजा किस किस चीज से बचे, प्रजा पालन का अर्थ क्या होता है—इन विषयों पर इस प्रकरण में बहुत सूक्ष्मता से विचार हुआ है और महत्वपूर्ण सामग्री है इसमें। इसमें पद्मपुराण से पहले रामकथा में लव कुश काण्ड का वर्णन है। यद्यपि वह कथा पहले से न रही होती तो **उत्तर रामचरित** में उसका विशद संकेत में न मिलता।

अग्निपुराण में कथा विस्तार में है, **पद्मपुराण** में और विस्तार में है। **अग्निपुराण** में प्राय: राम को ही वक्ता बनाया गया है। यह कदाचित् कुछ अलग है दूसरे पुराणों से। **अग्निपुराण** में वास्तु और वास्तु की प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया है वह एक तरह से **मानसार** के पूर्व एक दृढ़पीठिका है। सरसरी निगाह से देखा तो साहित्य शास्त्र के बारे में **अग्निपुराण** में संक्षेप में कहा गया है। अलम् का प्रयोग बड़ा सार्थक प्रयोग है। यह प्रयोग वेद में सबसे पहले है पर्याप्त के अर्थ में और देव स्तुतियों में बहुत जगह अलम् का प्रयोग है। अलम् कार्य अलंकार का मूल अर्थ पर्याप्तीकरण नहीं है। जो अपर्याप्त है उसको पर्याप्त करें। अलंकार का अर्थ सजाना बजाना नहीं है। अपितु जो न्यून है, जिसमें कहीं कुछ कमी है उस कमी को दूर करना और उसे पर्याप्त करना, यही उसका अर्थ है। तो उस अलंकार विधान में तो बहुत कुछ आ जाता है और उस विधान को स्वीकार करें तो विश्वमात्र को पूर्ण करना, यही ब्रह्म सिद्धि है। अपर्याप्तता का अनुभव करना यही सचमुच परमार्थसिद्धि है। तो साहित्य की जो भी दृष्टि थी, उस दृष्टि से प्रभावी दृष्टि थी।

पहले के आचार्य जैसे दण्डी के मतिष्क में वही दृष्टि थी। अलंकार का एक सीमित अर्थ लिया गया-भूषा-जो उसका एक बहुत ही छोटा अर्थ है। और उस अर्थ के नाते बहुत सारी प्रतिवृत्तियाँ विकसित हो गयीं और अलंकार का रस से झगड़ा हो गया। जिसके लिये कोई अवसर नहीं था। क्योंकि रस भी लगभग वही काम है जो अलंकार करता है। नाट्य के प्रकरण में रस की स्थिति का महत्त्व ही इसलिए है कि सब कुछ तो है, सब कुछ दिया हुआ है। कथा जानी हुई, अभिनय करने वाले जाने हुए, वही अभिनय राम का करते रहे, अभिमन्यु का करते रहे, कृष्ण का करते रहे, सब परिचित हैं। कथा भी लोगों को ज्ञात है। और उसी कथा की उन्हीं अभिनेताओं द्वारा जो प्रस्तुति होती है, उसमें कुछ नया

जुड़ता रहता है। वह क्या जुड़ता है, जुड़ने वाला पदार्थ क्या है? उसी मनोवृत्ति का अनुकीर्तन करते हैं, लेकिन अनुकीर्तन में जो नया उन्मेष होता है, जो संगीत शास्त्र की शब्दाबली का प्रयोग करें, इम्प्रोवाइजेशन होता है, वह महत्वपूर्ण है। इम्प्रोवाइजेशन जिस समय होता है उस समय अभिनेता को भी पता नहीं रहता है कि हमको इम्प्रोवाइज करना है। संगीत के गाने वाले को भी जब इम्प्रोवाइजेशन, बिल्कुल अपने रंग मे आ जाता है, पता नहीं रहता है कि हम क्या इम्प्रोवाइजेशन करने जा रहे हैं। इस प्रकार श्रोता को भी जो अर्थ ग्रहण करता है, तो जिस पर उस अपनापा खोने का अवसर आता है, उसका पता नहीं रहता है। पहले कोई सम्भावना नहीं रहती है कि हम इस बिन्दु पर आयेंगे तो हम अपने को भूल जायेंगे, और हम अपना तादात्म्य स्थापित करेंगे। स्पष्टत: तादात्म्य अभिनेता से स्थापित नहीं करेंगे, जिसका अभिनय हो रहा है, अभिनीयमान है उससे भी स्थापित नहीं कर सकते। देश, काल सामर्थ्य की बहुत दूरी है। तो किससे हमारा होगा तादात्म्य। तादात्म्य निश्चित वृत्ति विशेष से ही होगा। तो वहाँ भी अलम् की मर्यादा ही काम आती है। मर्यादा की अनन्त सम्भावनाएं हैं। अलम् को उस अनन्त सम्भावनाओं को एक नाम देना आवश्यक हो जाता है। इस ओर **अग्निपुराण** में संकेत है। एक ही संस्करण में है वह। उस संकेत में निश्चय ही एक संदेश छिपा हुआ है, एक परम्परा है जो बराबर जीवित रहती है, खण्डित नहीं होती, त्रुटित नहीं होती। आठवीं शताब्दी समय मानें, नवीं शताब्दी समय मानें इससे आगे तो नहीं मान सकते तो आठवीं, नवीं तक ही इसका समय मान सकते हैं।

ऐसा लगता है कि इस पुराण में सामग्री कई किश्तों में जुड़ी है। मूल सामग्री इसकी क्या है, यह अनुसन्धेय विषय है। परन्तु इसमें कई किश्तों में सामग्री जुड़ी हुई है। ऐसी सामग्री कुछ और पुराणों में जुड़ी है। पर सबसे अधिक असमाधेय रूप में सामग्री **अग्निपुराण** में जुड़ी है। क्योंकि और पुराणों में एक विन्यास आदि भी दिया हुआ है, उस विन्यास का अनुसरण होता है। उस विन्यास की चर्चा दूसरे समानान्तर पुराणों में है, उससे निर्णय होता है। इसमें ऐसा कोई विन्यास नहीं है। **महाभारत** में अगर कोई चीज जुड़ी है, **रामायण** में कोई चीज जुड़ी है तो विन्यास के अगर प्रतिकूल है तो उसका हम तिरस्कार कर सकते हैं। लेकिन विन्यास के अनुकूल है तो उसका तिरस्कार हम नहीं कर सकते। इसे तो **वाल्मीकि रामायण** में सीता परित्याग वाले प्रसंग में उत्तरकाण्ड के दूसरे खण्ड को प्रक्षिप्त मानते हैं, पर यदि जोड़ा गया मान लें तो संगति आरम्भ में जो कहा गया, सीताया: चरितम्, उससे नहीं होती है। सीता के चरित्र का जो सबसे उत्कर्ष बिन्दु है वह तो सीता त्याग के बाद, सीता की तेजस्विता, सीता की एकनिष्ठा, दोनो चीजें मिलती हैं सीता में, और वही सीता चरित्र का एक तरह से प्राण है। इसमें रामकथा से आरम्भ ही होता है। किसी किसी संस्करण में इतनी विस्तृत रामकथा नहीं है। हां निर्णयसागर वाले संस्करण में पूरी रामकथा है और अग्निपुराण में इस कथा का होना यह तो निश्चित ही सूचित करता है कि रामकथा का महत्त्व इस समय के आसपास जो भी शिल्पाकंन हो पाते है, जो भी हम नाटकों की पूरी श्रृंखला पाता हैं, उसी समय उसके बाद चाहे राजशेखर हों, चाहे मुरारि हों, तमाम लोगों में जो उसका विस्तार पाते हैं, उससे भी यही सूचित होता है कि यह **अग्निपुराण** एक ऐसे द्वार पर है जिसके बाद रामकथा जनमानस के ध्यान में आ जाती है। कृष्णकथा उससे पहले आयी, इसमें कोई सन्देह नहीं। क्योंकि कृष्ण से सम्बद्ध अभिलेख भी ईसा से पहले मिलते हैं। घोसुण्डी है विशेष रूप से, विदिशा अभिलेख है और पहली शताब्दी के बाद तो बहुत सारे अभिलेख हैं और शिल्प में भी बहुत सारे प्रमाण हैं।

अग्निपुराण का प्रभाव, जहाँ तक रामकथा का प्रश्न है, भारत के जनमानस पर और भारत से जुड़े हुए, भारत के साझीदार दूसरे देशों के जनमानस पर पड़ा है। राजधर्म में सबसे अधिक आकर्षक तथ्य कौटिल्य का 'शासनस्य मूलम् इन्द्रिय निग्रह:' था। आरम्भ ही लगभग वहीं से होता है। यदि इन्द्रिय जय न हो तो शासन नहीं हो सकता। तो इसमें भी नय-विनय, शील आदि की चर्चा विस्तार में एकावली के रूप में की गयी है। एक ऐसी राजव्यवस्था का वर्णन है जिसमें राजा का प्रजाहित में सम्पूर्ण विलयन है।